कविता

12

पहाड़ की बेटी

आभा मलिक*

मैं हूँ पहाड़ की बेटी
नाम है मेरा नदी
प्रौढ़ होकर चली मगन
छूने ये धरती, ये गगन
पर जब पहुँची थी शहर
मुझ पर टूटा ऐसा कहर
हो गयी मैली दूषित मैं
रूप अपना न पहचान सकी मैं
किसने किया, न जान सकी मैं
उसको न पहचान सकी मैं
आखिर दोष ही क्या था मेरा
ये माल, कचरा था तो तेरा
फिर मुझे क्यों इसकी सौगात मिली?
इससे तेरी औकात दिखी

किस मुँह से अब मैं सागर से मिलूँ
मिल कर क्यों उसको भी दूषित करूँ
क्यों अपना विष मैं उसमें घोलूँ
उसके जीवों से क्या जाकर बोलूँ
क्यूँ लूँ उनके प्राण निर्दोष
अगर न रुके तुम्हारे हाथ
छोड़ दूँगी मैं इस जग का साथ
फिर न होंगी फ़सलें हरी
फिर न होंगी भूख भरी
फिर तृप्त न होगा तुम्हारा कण्ठ
फिर किस पर करोगे तुम घमंड?
समय अभी बचा है शेष
कर दो मुझ में मल, कचरा निषेध

*शोधार्थी, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, बनारस, उत्तर प्रदेश